Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2018 GISRRJ | Volume 1 | Issue 1 | ISSN : 2582-0095

सठोत्तरी हिन्दी कविता में यथार्थ बोध

डा0 राकेश चन्द्र

असि0प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, जे0वी0 जैन कॉलेज, सहारनपुर

साहित्य समाज का दर्पण होता है। देश, काल और वातावरण के अनुरूप समाज में जब–जब परिवर्तन होता है, लोगों की भावनायें भी बदल जाती हैं। समाज और सामाजिक में होने वाले इस परिवर्तन को साहित्य में लाने का दायित्व लेखक अथवा कवि का होता है। परिवर्तन एक अनिवार्य एवं नैसर्गिक प्रक्रिया है। देश, काल एवं परिस्थितियों में होने वाले परिवर्तन के साथ–साथ कवि की भावनात्मक दुनिया भी बदल जाती है जिसमें वह जीता है। कविता समय, परिवेश और परिस्थितियों से ही उपजती है अर्थात समयानुकूल परिवर्तन के अभाव में कविता कभी भी चिरंजीवी नहीं हो सकती। उसे समय की चुनौती को स्वीकारते हुए ही आगे बढना होता है। जीवन और जगत में होने वाले बदलाव को समाहित करते हुए आम आदमी की पीड़ा, तड़प, छटपटाहट, कुंठा एवं संत्रास की अभिव्यक्ति ही इसे सार्थक बनाती है।

कविता की विभिन्न धाराओं की तरह ही सठोत्तरी, कविता भी पूर्व की कविताओं की भाँति एक अलग भाव–भंगिमा के साथ सामने आती है। कहने की आवश्यकता नहीं है कि जिस प्रकार 1930, 1940, 1950 के दशक की कविताओं में अन्तर था उसी प्रकार 1960 और उसके बाद की कविताओं में भी पर्याप्त वैचित्र्य एवं बैविध्य दिखाई पड़ता है। 1960 तक आते–आते नयी कविता की जो विद्रोही चेतना लगभग मृतप्राय हो गयी थी और उसके तमाम शब्द, उपमान, प्रतीक, बिम्ब शैली एवं तेवर फीके पड़ गये थे, साठोत्तरी कविताओं में वह फिर से यथार्थ की धरातल पर सजल हो उठे। सठोत्तरी कविताओं में भक्ति, श्रृगार तथा नीति के स्थान पर आम आदमी की पीड़ा, कुंठा, संत्रास, विद्रोह, विक्षोभ एवं आक्रोश दिखाई देता है। सठोत्तरी कवियों ने अपनी रचनाओं में प्रकृति की सुरम्य वादियों को स्थान न देकर आम आदमी के जीवन से साक्षात्कार किया। वस्तुतः सन् साठ के बाद की कविता नवीन सौन्दर्यबोध एवं नये संवेदनों की कविता है। शब्द, उपमान, प्रतीक, बिम्ब विधान, अप्रस्तुत विधान, भाव–भंगिमा एवं अभिव्यक्ति आदि सब कुछ एक नये धरातल का निर्माण करते हुए दिखाई पड़ते हैं। इन कविताओं ने विकास के विभिन्न सोपानों से गुजरते हुए यथार्थ को अपना विषय बनाया है। ये कवितायें मृत मान्यताओं, टूटती परम्पराओं एवं सामाजिक, राजनीतिक भ्रष्टाचार की ज्वलंत अभिव्यक्ति ही नहीं है, बल्कि इन कविताओं में जीवन के प्रति प्रेरणा प्रदान करने की शक्ति भी है। राजकमल चौधरी की कविता 'मुक्ति प्रसंग' जिसे अस्वीकृति की कविता भी कहा गया है, को नयी कविता से अलग हटने का प्रयास माना जाता है।

सठोत्तरी कविता में जहाँ एक ओर बिखरी हुई दुहरी जिन्दगी दिखाई पड़ती है, वहाँ दूसरी ओर बदलते मानवीय सम्बन्धों का विवेचन एवं विश्लेषण भी नजर आता है। इन कविताओं में फूल, पत्तियों, झरनों, पहाड़ों, नदियों के

स्थान पर जूलुस, नारा, लाठी चार्ज, कर्फ्यू, चुनाव, मतदान एवं संसद की बातें हैं, जो समकालीन परिवेश की उपज है।

आज का कवि अपनी अनुभूति को सीधें एवं सपाट लहजे में कह देना चाहता है। यही कारण है कि यह बिम्बों, प्रतीकों और तुकबन्दियों का त्याग करता जा रहा है। आज की कविता में जो परिवेशगत घृणा दिखाई पड़ती है, उसमें भी एक दर्द है। इन कवियों ने भोगे गये यथार्थ को अपनी कविताओं में स्थान देकर आम आदमी की पीड़ा और टीस को उजागर किया है। आज की अस्त–व्यस्त जिन्दगी और व्यवस्था के प्रति, विद्रोह का जो स्वर इन कविताओं में मिलता है, वह वर्तमान का सीधा साक्षात्कार है। आज की कविता साधारण जन के पहचान एवं तलाश की कविता है। इन कविताओं का विषय और स्वर बदला हुआ है। इसमें जन सामान्य का दुःख–सुख ही नहीं वरन् आम आदमी की नियति का भी सीधा साक्षात्कार है। यद्यपि सभी कवियों के तेवर और अन्दाज अलग हैं लेकिन इस युग के सभी कवि सामान्य जन की स्थिति और नियति से परिचित हैं। वे अपने समय की परिस्थितियों से बेखबर नहीं है। यही कारण है कि उनमें एक प्रकार का अर्न्तद्वन्द्व एवं बेचैनी है, जो उन्हें संघर्ष की ओर ले जाती है।

आज की कविता वास्तविकता के धरातल पर खड़े होकर जीवन के अनेक पहलुओं को समेटे हुए आगे बढ रही है। अपने समय और अपने देश की स्थिति का यथार्थ चित्रण धूमिल की कविताओं में बखूबी दिखाई पड़ता है–

और मैं सोचने लगता हूँ कि इस देश में
एकता युद्ध की और दया
अकाल की पूँजी है
क्रान्ति–
यहाँ के असंग लोगों के लिए
किसी अबोध बच्चे के–
हाथों की जूजी है[1]

(अकाल दर्शन)

वर्तमान की बजबजाती हुई सतह पर
हिजड़ों की एक पूरी पीढ़ी लूप और अन्धा कूप के मसले पर
बहस कर रही है कि
आजादी–इस दरिद्र परिवार की बीससाला बिटिया
मासिक धर्म में डूबे हुए क्वारेपन की आग से
अन्धे अतीत और लँगड़े भविष्य की
चिलम भर रही है।[2]

(राजकमल चौधरी के लिए)

इस प्रकार के अनेकों उद्धरणों से समकालीन संसार भरा पड़ा है। कवि अपने आस–पास के जीवन को समझदारी से पकड़ते हैं और उसे एक विवेकपूर्ण अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं। उनकी प्रतिक्रियायें निर्मम हैं तथा समूचे व्यवस्था तत्र को झकझोर कर रख देने वाली हैं। धूमिल की कविता 'मोचीराम' आम आदमी की बिगड़ी हुई हालत और उससे उत्पन्न बेचैनी को बखूबी उजागर करती है–

बाबूजी! सच कहूँ मेरी निगाह में
न कोई छोटा है
न कोई बड़ा है
मेरे लिए हर आदमी एक जोड़ी जूता है
जो मेरे सामने
मरम्मत के लिए खड़ा है।(3)

(मोचीराम)

कवि का 'मोचीराम' जिसके लिए सभी ग्राहक हैं, जिन्दा रहने के पीछे का तर्क खोजता हुआ अपने श्रम को अन्न में बदलने की कोशिश कर रहा हैं।

इसी प्रकार अर्थव्यवस्था जो आज के समाज की धुरी बन चुकी है, पर भी सठोत्तरी कवि की लेखनी चुप नहीं रहती। वह देखता है कि किस प्रकार पैसों के आगे एक आम आदमी लाचार और बेबस बन कर रह गया है। लीलाधर जगूड़ी की यह कविता भी वर्तमान अर्थव्यवस्था का साक्षात्कार कराती है–

कोई आत्मा बिक रही होगी
ये सिक्के.....
आत्मा किस अठन्नी का नाम हैं?
इन सिक्कों में से किसमें
मेरी आत्मा की सबसे बड़ी खुशी भरी है?(4)

केदारनाथ सिंह की अनेक कवितायें आर्थिक संदर्भों से जुड़ी हुई हैं। उनकी कविता 'जाड़े के शुरू में आलू' सीधे–सीधे उत्पादन, उत्पादक तथा उपभोक्ता के आर्थिक शोषण को दर्शाती है–

मैं उसका छिलका उठाता हूँ
और झाँककर पूछता हूँ मेरा घर
मेरा घर कहाँ है?(5)

सठोत्तरी हिन्दी कवियों ने वर्ग वैषम्य और लोक चेतना को भी अपनी कविताओं का विषय बनाया है। मध्यवर्गीय समाज की स्थिति इस वर्तमान व्यवस्था में कैसी है? वह किस प्रकार व्यवस्था के ताने बाने में फँसकर रह गया है। इस बात की पड़ताल सठोत्तरी कविता में बखूबी दिखाई पड़ती है–

जब सड़कों पर होता हूँ

बहसों में होता हूँ
रह रहकर चहकता हूँ
लेकिन वापिस हर बार लौटकर
कमरे के अपने एकान्त में
जूते से निकाले गये पाँव सा महकता हूँ।(6)

(कुमार विकल)

विश्वनाथ प्रसाद तिवारी का कवि मन होठों की मुस्कान छीन लेने वाले बेरहम पैशाचिकों के प्रति घृणा करता है और वर्तमान पूँजीवादी तंत्र की कलई–खोलता हुआ कहता है कि–

कुछ नहीं हो सकता
संगीनों के साये में
सिर्फ बलात्कार हो सकता है
यह चारो ओर का अहस्तक्षेप
सिर्फ आदमीयत को नष्ट करने की साजिश है।(7)

सठोत्तरी कवियों ने केवल वर्ग संघर्ष और सामाजिक विषमताओं तक ही अपने को सीमित नहीं रखा हैं, बल्कि उससे बाहर निकलकर समतावादी समाज की स्थापना के लिए भी अपनी कविता के माध्यम से प्रयास किया है–

मैं लड़ रहा हूँ मोर्चे पर
लेखनी की शक्ति गर्जना से
मैं कलेजा शोषकों का फाड़ता हूँ
सूदखोरों, मिलमालिकों
अर्थ पैशाचिकों को
सर्वहारा की नवोदित सभ्यता से जीतता हूँ।(8)

(कुमार विकल)

आज का कवि जनमानस में व्याप्त भय को दूर करके उसके अर्न्तमन में उत्साह का संचार भी करता है–

आदमी के हाथ.....
बड़े काम करते हैं भाई
आओ अभी भी वक्त है
अपनी चीख को जमीन में मत गाड़ो
जोड़ो दूसरी चीख से.....
आगे बढ़ो मेरे दोस्त।(9)

इस प्रकार कहा जा सकता है कि सठोत्तरी हिन्दी कविता ने पाठकों को अपनी उपस्थिति के लिए आमंत्रित किया है। सहज अभिव्यक्ति के माध्यम से लोक जीवन के विभिन्न पहलुओं को उजागर कर आम आदमी की व्यथा को सामने लाने का कार्य इस युग के कवियों ने बखूबी किया है। विभिन्न प्रकार की विषमताओं और शोषण के खिलाफ आवाज उठाकर जन मानस के अर्न्तमन में संघर्ष की चिंगारी जगाते हुए एक बेहतर जीवन की आशा का संचार भी इस युग की कविताओं में मिलता है।

संदर्भ ग्रन्थ

(1) धूमिल : संसद से सड़क तक, राजकमल प्रकाशन–2006, पृ0 18

(2) वही : पृ0 31

(3) वही : पृ0 37

(4) लीलाधर जगूड़ी : धबराये हुए शब्द, राजकमल प्रकाशन– 1998, पृ0 33

(5) केदारनाथ सिंह : जमीन पक रही है, प्रकाशन संस्थान– 2000, पृ0 57

(6) कुमार विकल : एक छोटी सी लड़ाई, पृ0 38

(7) विश्वनाथ प्रसाद तिवारी : साथ चलते हुए, पृ0 09

(8) कुमार विकल : एक छोटी सी लड़ाई, पृ0 32

(9) प्रभात त्रिपाठी : नहीं लिख सका मैं, पृ0 54